असहमति का दम घोंटना
भारत में शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति का अपराधीकरण

ह्यूमन राइट्स वाच | 2016

सारांश

> लोकतंत्र में विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता बुनियादी मूल्य हैं और संवैधानिक व्यवस्था में इन्हें सर्वोच्च महत्व दिया गया है।
>
> - भारत का सर्वोच्च न्यायालय, *श्रेया सिंघल बनाम भारत का संघ,* 24 मार्च, 2015।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भारतीय संविधान और उन अंतर्राष्ट्रीय संधियों के अधीन संरक्षित है जिनका भारत एक पक्ष है। राजनीतिज्ञ, विद्वान, एक्टिविस्ट और आम आदमी अखबारों, टेलीविजन और सोशल मीडिया सहित इन्टरनेट के माध्यम से जोरदार बहस में मशगूल रहते हैं। एक के बाद एक सरकारों ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा करने के वादे किए हैं।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने जून 2014 में अपने कार्यकाल के एक माह के बाद कहा था, "अगर हम बोलने और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की गारंटी नहीं देंगे तो हमारा लोकतंत्र नहीं चलेगा।" वास्तव में बोलने की पूरी आज़ादी इतनी गहराई तक जमी हुई है कि 2005 की अमर्त्य सेन की किताब, *द आर्गुमेंटेटिव इंडियन*, आज भी प्रासंगिक है।

लेकिन राष्ट्रीय और राज्य स्तरों दोनों पर भारतीय सरकारें इन मूल्यों से सदैव सहमत नहीं दिखतीं और ऐसे कानून बनाती रहती हैं और कठोर कार्रवाइयां करती रहती हैं जो शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति का अपराधीकरण करती हैं। असहमति को दबाने के लिए सरकारें दंड संहिता के राजद्रोह प्रावधान, आपराधिक मानहानि कानून और नफरत फैलाने वाले भाषणों से निपटने के कानून जैसे कठोर प्रावधानों का प्रयोग करती हैं। ये कानून अस्पष्ट एवं बहुत अधिक विस्तृत हैं और इनके दुरुपयोग की संभावना बहुत अधिक रहती है। राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर राजनीतिक उद्देश्यों से आलोचकों के विरुद्ध इनका बार-बार इस्तेमाल किया गया है।

हांलाकि कुछ मुकदमों को अंत में खारिज कर दिया गया,फिर भी कुछ लोगों को महज शांतिपूर्ण भाषणों के लिए गिरफ्तार किया गया है, अभियोजन पूर्व बंदी बनाया गया और उन्हें खर्चीले आपराधिक ट्रायल से गुजरने के लिए मजबूर किया गया। ऐसी कार्रवाइयों के डर, और यह अनिश्चिततता कि आखिर कानून कैसे लागू किया जाएगा, के कारण लोग खुद पर सेंसरशिप लगा लेते हैं।

कई मामलों में तमाम भारतीय सरकारें उन स्थानीय अधिकारियों और गैर सरकारी किरदारों/ प्राइवेट एक्टरों को रोकने में नाकाम हुई हैं जो अल्पमत के विचारों को व्यक्त करनेवाले व्यक्तियों को परेशान करने के लिए अभिव्यक्ति के अपराधीकरण के कानूनों का दुरुपयोग करते हैं। साथ ही ये सरकारें ऐसे वक्ताओं को चरमपंथी समूहों के हिंसक हमलों से नहीं बचा पाई है। इसके बजाए उन्होंने ऐसे हित समूहों को खुली छूट दे रखी है जो राजनीतिक कारणों से यह कहते हैं कि किसी खास किताब, फिल्म या कलाकृति से उनकी भावनाएं आहत हुई हैं। ऐसे मामलों में अधिकारी हिंसक विरोधों और सांप्रदायिक हिंसा के खतरों का हवाला देते हुए सार्वजनिक कानून-व्यवस्था बनाए रखने के लिए अभिव्यक्ति पर प्रतिबंध को उचित ठहराते हैं। हालांकि ऐसे हालात हो सकते हैं कि जिनमें सचमुच ही कोई भाषण अपनी सीमा रेखा को

पार कर हिंसा उकसाने का काम करता हो और ऐसे मामलों में कानूनी कार्रवाई होनी चाहिए लेकिन प्रायः अधिकारी, विशेषकर राज्यों में, आलोचनात्मक अथवा अल्पमत के विचारों को दबाने के लिए आपराधिक कानूनों का दुरुपयोग करते हैं या ऐसा करने की अनुमति देते हैं।

यह रिपोर्ट विस्तार से बताती है कि किस प्रकार आपराधिक कानूनों का उपयोग भारत में शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति को रोकने के लिए किया जाता है। यह उन तरीकों का दस्तावेजीकरण करती है जिनमेंराजनीतिक असहमति का गला घोंटने, पत्रकारों को परेशान करने, गैर सरकारी संगठनों की गतिविधियों को रोकने, इंटरनेट साइट्स को मनमाने तरीके से ब्लॉक करने या उनकी सामग्री को हटाने के लिए और धार्मिक अल्पसंख्यकों और सीमांत समुदायों जैसे कि दलितों कोनिशाना बनाने के लिए अस्पष्ट या मौजूदा कानूनों का इस्तेमाल किया जाता है।

रिपोर्ट उन कानूनों को चिन्हित करती है जिन्हें या तो समाप्त या संशोधित किया जाना चाहिए ताकि इन्हें अंतर्राष्ट्रीय कानूनों और संधियों के प्रति भारत की प्रतिबद्धता के अनुरूप किया जा सके। अनेक मामलों में, इन कानूनों के दायरे पर सर्वोच्च न्यायालय के फैसलों या परामर्शों की अवहेलना करते हुए इनका दुरुपयोग किया गया है। उदाहरण के लिए, 1962 में सर्वोच्च न्यायालय ने यह फैसला दिया था कि किसी भाषण या क्रियाकलाप को तभी राजद्रोह माना जाएगा जब उससे हिंसा भड़कती हो या फिर इसकी आशंका हो। फिर भी विभिन्न राज्य सरकारें उन मामलों में भी लोगों पर राजद्रोह का आरोप लगाती रही हैं जहां ये मानक पूरी तरह फिट नहीं बैठते।

हालांकि भारत के न्यायालयों ने आम तौर पर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को संरक्षित किया है लेकिन उनका रिकार्ड एक सा नहीं है। कुछ निचली अदालतें कमजोर तर्कों के साथ भाषणों पर अंकुश लगाने वाले फैसले दे रही हैं। उच्चतम न्यायालय, जो कि प्रायः अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का प्रबल संरक्षक रहा है, कई मौकों पर असंगत रहा है, जिससे निचली अदालतों को यह मौका मिल जाता है कि वे पहले के किन फैसलों पर ज्यादा जोर दें। इस असंगत रवैये के कारण खुलकर बोलने के अधिकार का क्षेत्र संकुचित हो गया है और स्थानीय अधिकारियों और हित समूहों को यह मौका मिल गया है कि वे अप्रिय और असहमति रखने वालों को हैरान-परेशान और उनका भयादोहन करें।

भारत में समस्या यह नहीं है कि संविधान बोलने की गारंटी , बल्कि कई मौजूदा कानूनों, नकारा आपराधिक न्याय प्रणाली और उपरोक्त विधिक सुस्थिरता के अभाव के कारण बोलने की आजादी को दबाना आसान हो जाता है। भारत की न्यायिक प्रणाली अवरुद्ध और अभिभूत होने के लिए कुख्यात है, जिससे न्यायिक प्रक्रिया लंबी और खर्चीली हो जाती है। यह स्थिति निरपराध लोगों को भी बोलने की आजादी के अपने अधिकारों हेतु लड़ने के लिए हतोत्साहित करती है।

राजद्रोह कानून

राजद्रोह कानून, भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) की धारा 124ए , औपनिवेशिक काल का कानून है जिसका इस्तेमाल ब्रितानी शासन से आजादी चाहनेवाले राजनीतिक नेताओं के खिलाफ किया जाता था। दुर्भाग्यवश, इसका उपयोग अभी भी असहमति रखनेवालों , मानवाधिकार कार्यकर्ताओं और सरकार के आलोचकों के विरुद्ध किया जाता है।

इस कानून में अधिकतम सजा आजीवन कारावासहै। यह किसी भी चिन्ह, दृश्य प्रदर्शनों, या बोले या लिखे गए शब्दों को प्रतिबंधित करता है जो सरकार के विरुद्ध "घृणा या अवमानना, या असंतोष भड़का सकते हैं या भड़काने की कोशिश कर सकते हैं"। यह भाषा अमूर्त और अस्पष्ट है तथा अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के प्रति भारत की वचनबद्धताओं का उल्लंघन करती है। ये अंतर्राष्ट्रीय कानून राष्ट्रीय सुरक्षा के आधार पर बोलने की आजादी पर प्रतिबंध लगाने से रोकते हैं बशर्ते कि उन्हें पूरी तरह समझा जाए और वो वाजिब खतरों से निपटने के लिए आवश्यक और उपयुक्त हों। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने हिंसा भड़काने को जरुरी आधार मानकर राजद्रोह कानून के उपयोग पर सीमाएं लगा रखी हैंलेकिन पुलिस राजद्रोह का आरोप उन मामलों में भी लगाती रहती है जिनमें इसकी आवश्यकता नहींहै।

राजद्रोह के मामले में सजा विरले ही होती है फिर भी इस धारा के तहत लोगों पर मुकदमा दर्ज करने और गिरफ्तार करने में अधिकारियों को कोई फर्क नहीं पड़ता। भारत सरकार के राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो, जिसने 2014 में राजद्रोह से जुड़ी सूचनाओं को एकत्र करना शुरू किया है, के अनुसार उस साल पूरे देश में 47 मुकदमे दर्ज किए गए, 58 लोगों को गिरफ्तार किया गया और एक व्यक्ति को सजा हुई। हालांकि 2015 के आधिकारिक आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। एक मीडिया वेबसाइट 'द हूट' ने 2016 की पहली तिमाही में गिरफ्तारियों में उल्लेखनीय वृद्धि की खबर दी है। 'द हूट' के मुताबिक पिछले दो वर्षों के पहली तिमाही में कोई गिरफ्तारी नहीं हुई थी, 2016 के पहले तीन महीनों में 19 लोगों के खिलाफ 11 मुकदमे दर्ज किए गए।

फरवरी 2016 में दिल्लीपुलिस ने जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय के छात्र नेता कन्हैया कुमार को कैंपस में आयोजित एक सभा के दौरान देशद्रोही नारे लगाने के सत्ताधारी भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) की छात्र इकाई की शिकायत पर गिरफ्तार किया। इस सार्वजनिक सभा का आयोजन मोहम्मद अफजल गुरु की फांसी के विरोध में किया गया था। अफजल गुरु को 2013 में फांसी दी गई थी। अफजल को यह सजा दिसम्बर 2001 में संसद पर हुए हमले, जिसमें नौ लोगों की मौत हुई थी, में उनकी संलिप्तता के लिए दी गई थी। अफजल गुरु की फांसी देश में तीखी बहस का विषय बनी हुई है। दिल्ली पुलिस ने न्यायालय में स्वीकार किया कि उपलब्ध वीडियो फुटेज में कन्हैया कुमार को कोई भी राष्ट्र विरोधी नारे लगाते नहीं देखा गया। दिल्ली उच्च न्यायालय ने उसे मार्च मेंजमानत दे दी। पांच और विद्यार्थियों पर भी यह मुकदमा दर्ज किया गया, उनमें दो, उमर खालिद और अनिर्बन भट्टाचार्य, को भी गिरफ्तार किया गया और बाद में जमानत पर छोड़ा गया।

पुलिस द्वारा इस स्वीकारोक्ति के बाद कि कन्हैया कुमार द्वारा राष्ट्र-विरोधी नारा लगाने और हिंसा भड़काने संबंधी उसके पास कोई ठोस सबूत नहीं है, सरकार अभी भी नहीं मानी है कि गिरफ्तारियां गलत हैं। कन्हैया कुमार की गिरफ्तारी यह दर्शाती है कि अप्रिय स्थितियों में सहिष्णुता के अर्थ और शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति के कानूनी संरक्षण की अनिवार्यता पर देश बंटा हुआ है।

अनेक ऐसे उदाहरण मौजूद हैं जिसमें राजनीतिक भाषण पर बंदिश लगाने के लिए राजद्रोह संबंधी प्रावधानों का इस्तेमाल किया गया। उदाहरण के लिए, मई 2012 में, तमिलनाडु की पुलिस ने हजारों लोगों के विरुद्ध राजद्रोह का मुकदमा दर्ज

किया जो कुडनकुलम में नाभिकीय ऊर्जा संयंत्र के निर्माण का शांतिपूर्ण विरोध कर रहे थे। इस परियोजना के खिलाफ संघर्ष की अगुवाई करनेवाले पीपल्स मूवमेंट एगेंस्ट न्यूक्लियर एनर्जी के संस्थापक एस पी उदय कुमार के अनुसार, 21 मामलों में 8,956 लोग राजद्रोह के आरोपों का सामना कर रहे हैं। मई 2012 में चेन्नई सॉलिडेरिटी ग्रुप के कार्यकर्ताओं ने एक जन सुनवाई की जिसमें मद्रास और दिल्ली उच्च न्यायालय के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश शामिल हुए। इसमें यह पाया गया कि राज्य ने आंदोलनकारियों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और सभा करने की आजादी, दोनों अधिकारों से वंचित किया।

सितम्बर 2012 में एक फैक्ट फाइंडिंग टीम की रिपोर्ट में आरोप लगाया कि राज्य के अधिकारियों ने असहमति की आवाज को दबाने के लिए शांतिपूर्ण आन्दोलनकारियों के विरुद्ध “अनुचित” बल का प्रयोग किया। जैसा कि इस रिपोर्ट में कहा गया हैः

> यदि एक साल से शांतिपूर्ण ढंग से प्रतिरोध करने वालों पर राजद्रोह और राष्ट्र के विरुद्ध युद्ध छेड़ने जैसे मनगढंत आरोप लगाए जा सकते हैं, जैसा कि यहां किया गया है, तो भारत में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और प्रतिरोध का भविष्य क्या है?

मुंबई के अधिकारियों ने सितंबर 2012 में राजनीतिक कार्टूनिस्ट असीम त्रिवेदी को राजद्रोह की धाराओं के तहत गिरफ्तार किया था। उन पर आरोप था कि उनके एक कार्टून में भारत के संविधान और राष्ट्रीय प्रतीकों का मजाक उड़ाया गया है। जन प्रतिरोध और सोशल मीडिया पर सामने आई नाराजगी के बाद एक महीने के बाद उन पर लगे आरोपों को वापस ले लिया गया।

उत्तर प्रदेश के अधिकारियों ने मार्च 2014 में भारत के विरुद्ध क्रिकेट मैच में पाकिस्तान का समर्थन करने के लिए 60 कश्मीरी छात्रों पर राजद्रोह का आरोप लगाया गया। हालाँकि, उत्तर प्रदेश सरकार ने कानून मंत्रालय की कानूनी राय के बाद आरोपों को वापस ले लिया। अगस्त 2014 में केरल में अधिकारियों ने छात्रों सहित सात युवाओं पर राजद्रोह का आरोप लगाया, उनके खिलाफ एक सिनेमा हाल में राष्ट्र गान के दौरान खड़े न होने की शिकायत की गयी थी।

अक्टूबर 2015 में तमिलनाडु में लोक गायक एस. कोवन को राजद्रोह के आरोप में गिरफ्तार किया गया क्योंकि उनके दो गानों में राज्य सरकार की यह आलोचना की गई थी कि वह गरीबों की कीमत पर राज्य-संचालित शराब की दुकानों से कथित रूप से लाभ कमा रही है।

आपराधिक मानहानि

ह्यूमन राइट्स वाच का मानना है कि आपराधिक मानहानि के कानूनों को समाप्त किया जाना चाहिएक्योंकि कानूनी दंड शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति का अतिक्रमण करते हैं और इन कानूनों के तहत हमेशा प्रतिष्ठा की हानि के मुकाबले ज्यादा सजा दी जाती है। आपराधिक मानहानि के कानूनों का आसानी से दुरुपयोग किया जा सकता हैजिसके तहत कारावास

समेत बहुत बुरे नतीजे सामने आते हैं। जैसा कि कई देशों में आपराधिक मानहानि के कानूनों की समाप्ति से जाहिर होता है कि ऐसे कानून प्रतिष्ठा की रक्षा करने के लिएआवश्यक नहीं हैं।

मुख्यमंत्री जयललिता के नेतृत्व वाली तत्कालीन तमिलनाडु राज्य सरकार ने पत्रकारों, मीडिया संस्थानों और विरोधी राजनीतिज्ञों के विरुद्ध बार-बार आपराधिक मानहानि के मुक़दमे दर्ज किये जो यह दर्शाता है कि सरकार की आलोचना के अपराधीकरण के लिए किस प्रकार कानून का दुरुपयोग किया जा सकता है। एक अनुमान के मुताबिक साल 2011 से 2016 के बीच तमिलनाडु सरकार ने लगभग 200 आपराधिक मानहानि के मुक़दमे दर्ज किए। विकटन समूह द्वारा प्रकाशित दो तमिल पत्रिकओं- आनंद विकटन और जूनियर विकटन के खिलाफ 34 आपराधिक मानहानि के मुकदमे चल रहे हैं। इन मुकदमों में लेखों की वह श्रृंखला भी शामिल है जिनमें हर कैबिनेट मंत्री के प्रदर्शन का आकलन किया गया था।

विपक्षी दल के एक नेता के विरुद्ध नवम्बर 2015 में तमिलनाडु सरकार द्वारा आपराधिक मानहानि के एक मामले पर स्थगन आदेश देते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने राज्य से बड़ी संख्या में आने वाले ऐसे मामलों पर सवाल उठाया था। न्यायाधीश ने कहा:

> ये आलोचनाएं राज्य के अवधारणात्मक शासन के संदर्भ में हैं न कि व्यक्ति के संदर्भ में। आखिर राज्य को क्यों व्यक्तियों के खिलाफ मुकदमे करने चाहिए? मानहानि मुक़दमे का यह मतलब नहीं होता।

हाल के वर्षों में निगमों और व्यापारिक संस्थानों ने भी आलोचना की आवाज को दबाने और पत्रकारों एवं लेखकों को हैरान-परेशान करने के लिए आपराधिक मानहानि कानूनों का इस्तेमाल किया है। एक बिजनेस स्कूल- इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ प्लानिंग एंड मैनेजमेंट (आईआईपीएम), , जिसका मुख्यालय नई दिल्ली में है, ने कई आपराधिक (और दीवानी) मानहानि मुकदमे दर्ज किए ताकि संस्थान के खिलाफ आलोचनात्मक सामग्री के प्रकाशन को रोका जा सके। उदाहरण के लिए, 2009 में आईआएपीएम ने आउटलुक और कैरियर्स 360 पत्रिकाओं के प्रकाशक महेश्वर पेरी के खिलाफ आपराधिक मानहानि का मामला दर्ज किया। इन पत्रिकाओं में निजी शैक्षणिक संस्थानों द्वारा छात्रों को कथित रुप से छलने पर एक लेख था। लेख में आईआईपीएम का हवाला दिया गया था और यह आईआईपीएम द्वारा किए गए दावों की असलियत पर सवाल करने वाले खोजपरक लेखों की श्रंखला का यह पहला लेख था। प्रायः मुकदमे देश के दूर-दराज के इलाकों में, जैसे के असम के सिलचर में दर्ज किए गए, जहां पर न तो आईआईपीएम और न ही प्रतिवादी की कोई उपस्थिति थी।

जनवरी 2016 तक पेरी के खिलाफ आपराधिक मानहानि के कुछ मुकदमों को खारिज हो जाने के बाद आईआईपीएम ने उनके खिलाफ सारे मुकदमे वापस ले लिए। पेरी ने ह्यूमन राइट्स वाच को बताया, “आपराधिक मानहानि का प्रयोग न्याय प्राप्त करने के लिए नहीं किया जाता बल्कि धमकाने और धौंस जमाने के लिए किया जाता है और इसे समाप्त कर दिया जाना चाहिए।”

मई 2016 में सर्वोच्च न्यायालय के दो जजों वाली एक बेंच ने भारत के आपराधिक मानहानि कानून की संवैधानिकता को सही ठहराते हुए कहा कि "किसी व्यक्ति की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का संतुलन दूसरे व्यक्ति के सम्मान के अधिकार के साथ संतुलित किया जाना चाहिए।" न्यायालय ने यह स्पष्ट नहीं किया कि किस प्रकार यह कानून अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों जो आपराधिक मानहानि कानूनों की समाप्ति की मांग करते हैं, का उल्लंघन नहीं करता है। न्यायालय ने यह भी स्पष्ट या अकाट्य तर्कों के साथ नहीं रखा कि क्यों एक ऐसे लोकतंत्र में जहां कार्यशील न्यायप्रणाली मौजूद है, दीवानी उपाय पर्याप्त नहीं हैं।

इंटरनेट को नियंत्रित करने वाले कानून

भारतीय अधिकारी इंटरनेट के विस्तार से हतोत्साहित और इसे नियंत्रित करने के प्रयासों में लड़खड़ाते हुए से दिखते हैं।

सोशल मीडिया को नियंत्रित करने के कानून, जैसे भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, प्रायः शक्तिशाली राजनीतिक व्यक्तियों के हित साधन के लिए भाषण के अपराधीकरण के औजार बन सकते हैं और ये आसानी से बन जाते हैं। इस अधिनियम की धारा 66ए, जो कई तरह के भाषणों का अपराधीकरण करती है, का दुरुपयोग अधिकारियों की आलोचना करने वाले लोगों को गिरफ्तार करने और सामग्री का सेंसर करने के लिए बार-बार किया गया है।

उदाहरण के लिए, मई 2014 में बैंगलोर के पांच छात्रों को अस्थाई तौर पर हिरासत में लिया गया। उन पर आरोप था कि उन्होंने मोबाइल एप्लीकेशन "व्हाट्सऐप" पर एक ऐसा संदेश साझा किया जो नवनिर्वाचित प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के प्रति आलोचनात्मक था। अप्रैल 2012 में पूर्वी राज्य पश्चिम बंगाल के जादवपुर विश्वविद्यालय में रसायन विज्ञान के प्रोफेसर अम्बिकेश महापात्र को राज्य की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी का मजाक बनाती ईमेल फारवर्ड करने के लिए गिरफ्तार किया गया। इसके एक महीने बाद पांडिचेरी में देश के तत्कालीन वित्त मंत्री के बेटे के द्वारा एकत्र किए गए धन पर सवाल करने वाले संदेशों को ट्विटर पर पोस्ट करने के लिए एक व्यापारी को पुलिस ने गिरफ्तार किया।

मार्च 2015 में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने धारा 66ए को असंवैधानिक घोषित कर दिया। सरकार ने कहा कि वह सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का अध्ययन कर रही है और संवैधानिक आवश्यकताओं के अनुरूप धारा 66ए को संशोधित कर सकती है। सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय भारत में इंटरनेट की आज़ादी के भविष्य के लिए महत्वपूर्ण सुरक्षा प्रदान करता है। हांलाकि इंटरनेट सामग्री को ब्लाक करने से संबंधित फैसले के पहलू चिंता पैदा करते हैं (इसका विस्तार से विवरण इस रिपोर्ट में बाद में है), कोई भी नया कानून न्यायालय के फैसलों और अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों द्वारा निर्धारित सुरक्षा मानदंडों के अनुरूप होना चाहिए।

आतंकवाद विरोधी कानून

आतंकवाद विरोधी कानून जैसे गैर कानूनी गतिविधियां (रोकथाम) अधिनियम (यूएपीए) का उपयोग भी शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति के अपराधीकरण में किया गया है। भारत में धार्मिक अल्पसंख्यकों और सीमांत समूहों मसलन दलितों के विरुद्ध आतंकवाद विरोधी कानूनों का प्रयोग बड़े पैमानों पर किया गया है। वर्ष 2011 और 2013 के बीच महाराष्ट्र में

अधिकारीयों ने सांस्कृतिक संगठन कबीर कला मंच के छः सदस्यों को आतंकवाद विरोधी कानूनों के अंतर्गत गिरफ्तार कर लिया। उन पर आरोप था कि वे प्रतिबंधित संगठन भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के गुप्त सदस्य हैं। हालांकि अधिकारियों ने ऐसी सदस्यता का कोई सबूत पेश नहीं किया और कबीर कला मंच के सदस्यों ने भी इन दावों को पूरी तरह बेबुनियाद कह कर खारिज कर दिया। पुणे के इस समूह में गायक, कवि और कलाकार हैं जो मुख्यतः दलित युवा हैं और वे दलितों और आदिवासी समूहों पर अत्याचार, सामाजिक असमानता, भ्रष्टाचार एवं हिन्दू-मुस्लिम संबंधों आदि मुद्दों पर जागरूकता के लिए संगीत, कविता और नुक्कड़ नाटकों का उपयोग करते हैं।

आतंकवाद विरोधी कानूनों का उल्लंघन करने के आरोपियों को "देशद्रोही" मान लिया जाता है। जिस तरह उन्हें आसानी से फंसाया जाता है, इससे अभियुक्तों और उनके परिवारों पर गंभीर प्रभाव पड़ सकता है, भले ही आखिर में वे बेकसूर पाए जाएं। आतंकवाद विरोधी मामलों पर काम करने वाले मुंबई के वकील विजय हिरेमठ ने ह्यूमन राइट्स वाच को बताया:

> ये लोग निगरानी में रहेंगे और पुलिस उन पर नजर रखेगी। छूटने के बाद भी उनके लिए सामान्य जीवन जीना दूभर हो जाएगा क्योंकि वे चाहे जो करें उन्हें शक की नजरों से देखा जाएगा।

प्रक्रिया ही सज़ा है

अमूमन भारत में न्यायिक प्रक्रिया से गुजरना अपने आप में सजा हो सकता है। देश की न्यायिक आपराधिक प्रणाली में आम तौर से अभियुक्त को लंबी और थकाऊ कानूनी प्रक्रियाओं का सामना करना पड़ता है। ऐसा लगता है कि कुछ मामलों में न्यायाधीश भी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के बारे में ठीक ढंग से प्रशिक्षित नहीं हैं, शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति पर रोक लगाने के मामले में वे सर्वोच्च न्यायालय के दिशा-निर्देशों को मानने में असफल हो जाते हैं।

हांलाकि उच्च न्यायालयों और विशेष रूप से सर्वोच्च न्यायालय में, शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति के अपराधीकरण के मामले प्रायः खारिज हो जाते हैं लेकिन यह इतनी देर से होता है कि आरोपों का सामना कर रहे और गिरफ्तार लोगों को सुरक्षा नहीं मिल पाती और उन्हें गंभीर परिणाम भुगतने पड़ते हैं। इन कानूनों के अंतर्गत कुछ अपराध गैर जमानती होते हैं और अभियुक्तों को मुकदमे से पहले गिरफ्तार किया जा सकता है। राजद्रोह, आतंकवाद और राष्ट्रीय सुरक्षा से संबधित कानून के आरोपियों को मुकदमे की कार्यवाही के दौरान भारी कीमत चुकानी पड़ती है। इसके अलावा कानूनी प्रक्रियाओं के दौरान अभियुक्तों को भारी वित्तीय बोझ भी उठाना पड़ता है।

उदाहरण के लिए, सरकारी गोपनीयता अधिनियम को लें। यह इस प्रमाण के बगैर कि कोई कृत्य राष्ट्रीय सुरक्षा या सार्वजनिक व्यवस्था के लिए खतरा है, कई सारे दस्तावेजों या सूचनाओ के खुलासा, उनके स्वामित्व या प्राप्ति का अपराधीकरण करता है। साथ ही यह गोपनीयता की एक ऐसी संस्कृति को बढ़ावा देता है जिसमें सरकारी गतिविधियों के बारे में सूचना प्राप्ति में निहित सार्वजनिक हितों को नकार दिया जाता है।रक्षा या जासूसी मामलों को कवर करने वाले पत्रकारों पर इस कानून के तहत आरोप मढ़े जाने का विशेष रूप से खतरा होता है। संबंधित कानून के अंतर्गत "जासूसी" करने के लिए14 वर्षों तक कारावास हो सकता है। हांलाकि सरकारी गोपनीयता अधिनियम के अंतर्गत दर्ज

किए गए कुछ मामले अंततः उच्च न्यायालयों द्वारा अंततः खारिज कर दिए जाते हैं लेकिन इससे आरोपियों को होने वाले नुकसान की भरपाई नहीं होती।

हालांकि सरकारी गोपनीयता अधिनियम का दुरुपयोग वैसा नहीं होता जैसा कि इस रिपोर्ट में राजद्रोह या आपराधिक मानहानि कानूनों के बारे में बताया गया है। फिर भी इस कानून के उपयोग के गंभीर नतीजे आए हैं। आरोपी को जेल में बिना जमानत के कई महीने और साल बिताने पड़ सकते है। इस कानून के दुरुपयोग का सबसे प्रमुख मामला है पत्रकार इफ्तिखार गिलानी का है। 2002 में उनकी गिरफ्तारी हुई जो यह दर्शाती है कि आरोपी पर कानूनी प्रक्रिया कितनी भारी पड़ती है। गिलानी पर एक गोपनीय दस्तावेज रखने का आरोप था, जबकि यह दस्तावेज इंटरनेट और दिल्ली के सार्वजनिक पुस्तकालयों में उपलब्ध था। जनवरी 2003 में रिहा होने के पहले गिलानी को सुनवाई के दौरान बिना जमानत के सात महीने जेल में गुजारने पड़े। गिलानी ने बताया कि उनकी जमानत की सुनवाई में ही चार महीने लग गएऔर फिर उसके बाद उनका आवेदन ख़ारिज कर दिया गया। सरकारी गोपनीयता अधिनियम के तहत आरोपियों को राज्य का संगीन दुश्मन माना जाता है जिससे जमानत मिलना बहुत कठिन हो जाता है।

दिल्ली में सरकारी गोपनीयता अधिनियम मामलों केवकील त्रिदीप पाइस ने कहा, "जब तक आप साबित करते हैं कि आपके पास उपलब्ध सामग्री गोपनीय नहीं है, आपको जेल में कई साल गुजारने पड़ सकते हैं। न्यायाधीशों में एक किस्म का पूर्वाग्रह बैठा होता है जब किसी व्यक्ति को सरकारी गोपनीयता अधिनियम के तहत कोर्ट में लाया जाता है।''

शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति का अपराधीकरण करने वाले अन्य कानून भी काफी कष्टदायक हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, तमिलनाडु में दायर किए गए आपराधिक मानहानि के मामलों में आरोपियों, जिनमें अधिकतर पत्रकार और संपादक हैं, को न्यायालय में हर पखवाड़े हाजिरी लगानी पड़ती है। अधिकांश सुनवाइयों में कार्यवाही स्थगित कर दी जाती है और अगली तारीख दे दी जाती है। इसमें समय और पैसा दोनों लगता है, जैसा कि ऐसे कई मामलों के अभियुक्त *जूनियर विकटन* पत्रिका के संपादक पी. तिरुमावेलन ने बताया:

> सरकार की मंशा मुकदमों को आगे बढ़ाने में नहीं है। उसकी मंशा केवल पत्रकारों और समाचार पत्रों में डर का माहौल पैदा करने की है। वास्तव में सरकार अगर गंभीर होती तो वह न्यायालय में अपना प्रमाण प्रस्तुत करती।

मीडिया मामलों के अधिवक्ता गौतम भाटिया के अनुसार दीवानी मुकदमों के मुकाबले आपराधिक मुकदमे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को ज्यादा बाधित करते हैं क्योंकि इनमें अभियुक्तों पर ज्यादा बोझ डाल दिया जाता है। समाचार वेबसाइट 'स्क्रॉल.इन' में प्रकाशित एक लेख में भाटिया लिखते हैं:

> किसी भी क्षण गिरफ्तारी और फिर बंदी बनाए जाने का खतरा वक्ताओं पर गहरा प्रभाव डालता है। यह तथ्य कि आरोपी को सुनवाई के दौरान उपस्थित होना होगा और दायर किए जाने वाले मुकदमों की संख्या की कोई सीमा नहीं है, दरअसल वक्ताओं के उत्पीड़न के लिए खुला निमंत्रण है। भले ही आरोपी के पास अच्छा बचाव पक्ष हो लेकिन यह तभी काम में आ सकता है जब मुकदमा शुरू हो। नतीजतन बेहद साधारण मामलों में भी

आरोपी को मुकदमा शुरू होने के पहले लंबी कानूनी प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है, जो अगर वर्षों तक नहीं भी तो महीनों तक खिच सकती है।

परिणामस्वरूप जिन लोगों पर निराधार आपराधिक आरोप लगाए जाते हैं वे ‘‘आपत्तिजनक’’ शब्द वापस ले लेते हैं ताकि वे इससे होने वाले कानूनी, वित्तीय और व्यक्तिगत दुष्प्रभावों से बच सकें। दूसरी ओर यदि मामला निराधार निकला तो शिकायतकर्ता का कुछ नहीं बिगड़ता।

तंग-तबाह करने वालों का वीटो (हेकलर्स वीटो)

कई भारतीय कानून लोगों के विभिन्न समूहों के बीच शत्रुता उत्पन्न करने या धर्म की अवमानना करने वाले “द्वेषपूर्ण भाषणों” को प्रतिबंधित करते हैं। हालांकि भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में अंतर-सामुदायिक विवादों को रोकना एक महत्वपूर्ण लक्ष्य है और इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए जरुरी है कि हिंसक कार्य और हिंसा भड़काने में लिप्त लोगों पर कार्रवाई हो और उन पर मुकदमे चलाए जाए, न कि भारी-भरकम कानूनों के जरिए अभिव्यक्ति की आजादी को सीमित कर दिया जाए।

भारत के द्वेषपूर्ण भाषण कानूनों का दायरा इतना बड़ा है कि ये शांतिपूर्ण भाषण को अतिक्रमित करते हैं और अंतर्राष्ट्रीय मानकों को पूरा नहीं करते हैं। हालांकि यह कानून अल्पसंख्यकों और कमजोर तबकों की सुरक्षा के लिए बनाए गए हैं लेकिन प्रायः इनका उपयोग शक्तिशाली व्यक्तियों या समूहों के दवाब में किया जाता है। ये शक्तिशाली लोग यह दावा करते हैं कि उनकी भावनाएं आहत हुई हैं और इसके बहाने वे विरोधियों की आवाज को चुप कराते हैं। कई बार राज्य भी ऐसी शिकायतों का संज्ञान लेता है और इससे अल्पसंख्यक समूहों, लेखकों, कलाकारों और विद्वानों के समक्ष हिंसा और कानूनी कार्रवाई का खतरा पैदा हो जाता है।

भारत के सुप्रसिद्ध कलाकार मकबूल फिदा हुसैन का उदाहरण सार्वजनिक असहिष्णुता का एक बड़ा उदाहरण है। हिन्दू दक्षिणपंथी समूहों ने उन पर हिन्दू देवी-देवताओं की नग्न तस्वीरें बनाने और इस प्रकार उनकी भावनाओं को ठेस पहुँचाने का आरोप लगाया और इस बिना पर हुसैन को देष छोड़ने पर मजबूर कर दिया। कट्टरपंथी हिन्दू समूहों ने हुसैन के घर और उनकी आर्ट गैलरियों पर हमला किया, लेकिन गुजरात, महाराष्ट्र और दिल्ली राज्य सरकारें उनकी या उनकी कलाकृतियों की रक्षा करने में नाकाम रहीं। इसके बजाय महाराष्ट्र के तत्कालीन सत्ताधारी दल शिव सेना के वरिष्ठ नेता बाल ठाकरे ने मुंबई में हुसैन के घर पर 1998 में हुए हमले का समर्थन कहते हुए किया, “अगर हुसैन हिंदुस्तान में प्रवेश कर सकते हैं... तो हम उनके घर में क्यों नहीं घुससकते?” लोगों ने हुसैन के खिलाफ देश में कई शहरों में आपराधिक द्वेषपूर्ण भाषण और अश्लीलताकानूनों के अंतर्गत मामले दर्ज किए,जिसके कारण उन्हें शिकायतों का उत्तर देने के लिए पूरे देश का चक्कर लगाना पड़ा।

दिल्ली उच्च न्यायालय ने 2008 में हुसैन की अभिव्यक्ति की आजादी के अधिकारों की पुष्टि की और “भारत माता” की पेंटिंग से संबंधित एक मामले में नग्नता और धार्मिक भावनाओं के आरोपों को खारिज कर दिया। न्यायालय ने कहा:

> हम जिस विचार से घृणा करते हैं उसके लिए स्वतंत्रता होनी चाहिए... यह समझना चाहिए कि असहिष्णुता का विचारों और विमर्शों की स्वतंत्रता पर घातक और बाध्यकारी प्रभाव पड़ता है। फलतः असहमति समाप्त हो जाती है और जब यह होता है तो लोकतंत्र अपना मूल तत्व खो देता है।

भारत के सर्वोच्च न्यायालय का यह फैसला है कि हिंसा के खतरों के आधार पर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को नहीं दबाया जा सकता क्योंकि "यह कानून के शासन का निषेध और भयादोहन एवं डर के समक्ष समर्पण के बराबर होगा"। इस फैसले के बावजूद पुलिस नियमित रूप से लोगों को उनके भाषणों पर प्रतिक्रिया के आधार पर गिरफ्तार करती रहती है। उदाहरण के लिए, नवम्बर 2012 में महाराष्ट्र में 21 साल की शाहीन धादा और रीनू श्रीनिवासन को उनके फेसबुक पोस्ट के लिए गिरफ्तार कर लिया गया। उन्होंने उस पोस्ट में एक शक्तिशाली राजनीतिज्ञ की मृत्यु के बाद मुंबईबंद पर सवाल उठाए थे। पुलिस ने उक्त नेता के समर्थकों की शिकायत और भीड़ द्वारा हिंसक आक्रमण के बाद यह कार्रवाई की।

इसी प्रकार कुछ व्यक्तियों और मुस्लिम समूहों द्वारा अनगिनत प्राथमिकियां दर्ज करने के बाद मुंबई में उर्दू अखबार की संपादक शिरीन दलवी को जनवरी 2015 में गिरफ्तार किया गया। उन पर आरोप था कि उन्होंने विवादास्पद फ्रांसीसी पत्रिका चार्ली हेब्दो द्वारा मूल रूप से प्रकाशित कार्टून को दुबारा छापकर ''धार्मिक भावनाओं को चोट'' पहुंचाई है और इसके पीछे उनकी "विद्वेषपूर्ण मंशा" है। दलवी ने बताया कि जमानत मिलने के बाद उन्हें छिपना पड़ा और अपने घर से अस्थाई रूप से हटना पड़ा जिससे कि वह लगातार उत्पीड़न और धमकियों से बच सकें। यह रिपोर्ट लिख जाने तक उनके खिलाफ मामला चल रहा था।

जनवरी 2015 में तमिलनाडु के नमक्कल गांव के जातीय समूहों ने स्थानीय तमिल लेखक पेरुमल मुरुगन द्वारा लिखी गयी एक पुस्तक का विरोध किया। उन लोगों ने इस पुस्तक की प्रतियां जलाईं, दुकानों को बंद कराया और पुलिस से कहा कि मुरुगन के खिलाफ कार्रवाई करे। पुलिस और जिला प्रशासन ने गुस्साई भीड़ से मुरुगन की रक्षा करने के बजाय उनसे कहा कि वह बिना शर्त की माफी मांगें। इस घटना के परिणामस्वरूप मुरुगन ने अपने लेखन करियर की तिलांजलि दे दी और अपने सभी कृतियों को प्रकाशन से हटा लिया।

अंतर्राष्ट्रीय कानून

1979 में भारत ने नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय संधिपत्र की अभिपुष्टि की। यह संधिपत्र अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की सुरक्षा के लिए अंतर्राष्ट्रीय मानकों को निर्धारित करता है। फिर भी जैसा कि नीचे के विवरणों से साफ है, कई सारे भारतीय कानूनी प्रावधान, जिनमें से कुछ का प्रयोग अभियोजक और वादी नियमित रूप से करते रहते हैं, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर रोक लगाते हैं जो इस संधिपत्र के तय मानकों के विपरीत है। कुछ मामलों में भारतीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने उचित फैसलों से इन कानूनों के दायरों को सीमित कर दिया है, इसके बावजूद उनका दुरुपयोग होता रहता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि अगर भारत को अपने अंतर्राष्ट्रीय दायित्वों का निर्वाह करना है तो इन कानूनों को संशोधित या इन्हें समाप्त करना होगा।

महत्वपूर्ण पहलू यह है कि उल्लंघन के परिणाम अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर अनुचित सीमाओं के परे चले जाते हैं। जैसा कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर संयुक्त राष्ट्र के भूतपूर्व विशेष रिपोर्टर फ्रैंक ला रु ने कहा है, "अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता न केवल एक बुनियादी अधिकार है, बल्कि यह अन्य अधिकारों को भी प्रभावी बनाता है। इन अधिकारों में शामिल हैं - आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार, जैसे शिक्षा का अधिकार और सांस्कृतिक जीवन में हिस्सेदारी का अधिकार तथा वैज्ञानिक प्रगति एवं इसके अनुप्रयोगों का लाभ उठाने का अधिकार, साथ-ही-साथ नागरिक और राजनीतिक अधिकार, जैसे संगठन बनाने और एकत्र होने का अधिकार। न्यायोचित अभिव्यक्ति को प्रतिबंधित करने के लिए आपराधिक कानून का स्वेच्छाचारी उपयोग अधिकारों के उल्लंघन का सबसे गंभीर रूप है। यह न केवल एक डर का माहौल पैदा करता है, बल्कि अन्य मानवाधिकारों का भी उल्लंघन करता है।"

मुख्य अनुशंसाएं

शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति का अपराधीकरण करने वाले भारतीय कानून और व्यवहार अंतर्राष्ट्रीय कानूनी दायित्वों के अनुरूप नहीं हैं। ये सांप्रदायिक हिंसा को कुचलने के प्रयासों को सशक्त करने के बजाय उसे कमजोर करते हैं। चूंकि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता अन्य अधिकारों को प्रभावी बनाती है, अतः ये कानून और व्यवहार आम तौर से मानवाधिकार संबंधी सुरक्षातंत्र को नुकसान पहुंचाते हैं।

ह्यूमन राइट्स वाचअनुशंसा करता है कि भारत:

- शांतिपूर्ण अभिव्यक्तिका अपराधीकरण करने वाले कानूनों को समाप्त या संशोधित करने के लिए एक स्पष्ट और कालबद्ध योजना बनाए (इस रिपोर्ट के अंत में ऐसे कानूनों का विवरण दिया गया है) और कानून संशोधन के मामले में पारदर्शी और सार्वजनिक रुप से नागरिक समाज से व्यापक परामर्श करे।
- शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति या सभा करने से संबंधित मामलों के तमाम मुकदमों को वापस ले और सभी जांचों को बंद करे।
- पुलिस को इस बात के लिए प्रशिक्षित करे कि अनुचित मामलों में पुलिस न्यायालयों में न ले जाए। इसके लिए शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति के मानकों पर न्यायाधीशों, विशेष रूप से निचली अदालतों के न्यायाधीशों, को प्रशिक्षित करे ताकि वे संरक्षित भाषणों का अतिक्रमण करने वाले मुकदमों को खारिज कर सकें।

अनुशंसाएं

भारत सरकार के लिए

- भारत के आपराधिक कानूनों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और संगठन बनाने के अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरुप संशोधित करे। ये मानक नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय संधिपत्र द्वारा निर्दिष्ट किए गए हैं और जैसा कि संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार कमिटी और संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था- विचारों और व्यक्तियों की स्वतंत्रता के प्रोत्साहन के संबंध में संयुक्त राष्ट्र की विशेष रिपोर्ट में - प्रतिपादित किया गया है।
- विशिष्ट संदर्भ के लिए सरकार की प्रतिक्रिया को निर्दिष्ट करते हुए सकारात्मक या गैर-दंडात्मक उपायों के जरिए विद्वेषपूर्ण भाषणों से निपटने के लिए नीतियों और प्रक्रियाओं का निर्माण करें। इसमें सार्वजनिक शिक्षा, सहिष्णुता को प्रोत्साहन, निन्दात्मक या उत्तेजक झूठे समाचारों का सार्वजनिक रूप से खंडन और खतरे में पड़ी आबादी की सुरक्षा आदि सम्मिलित हो सकते हैं।

भारतीय संसद के लिए

- इस रिपोर्ट में चिन्हित किए गए अधिकारों का हनन करने वाले कानूनों की समीक्षा करने, उन्हें समाप्त करने या उनमें सुधार करने के लिए स्पष्ट योजना और टाइम टेबल बनाए और जहां कानून को समाप्त किया जाना या संशोधित किया जाना है, उसके लिए नागरिक समाज समूहों से पारदर्शी तरीके से और सार्वजनिक रूप से करे।
- कानूनों के समाप्त करने या संशोधित करने हेतु विशिष्ट अनुशंसाओं में शामिल हैं:
  - भारतीय दंड संहिता की धारा 124ए , राजद्रोह कानून को समाप्त करें।
  - धर्म का अपमान या धार्मिक भावनाओं को आहत करने संबंधी आपराधिक दंड को समाप्त करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धरा 298 और 295ए को समाप्त करे। भारतीय दंड संहिता की धारा 153ए , 505(1)(सी) और 505(2) को समाप्त करे और उन्हें एक एकल द्वेषपूर्ण भाषण संबंधी कानून से प्रतिस्थापित करे जो “भेदभाव, शत्रुता या हिंसा को उकसाने वाली राष्ट्रीय, नस्लीय या धार्मिक घृणा की वकालत‘‘ का अपराधीकरण करता हो ताकि यह आईसीसीपीआर के अनुच्छेद 20 के अनुरूप हो सके।
    - यह सुनिश्चित करे कि नया कानून द्वेषपूर्ण भाषण के नियंत्रण की अनुमति केवल तभी देता हो जब इसे देना होता है, और इससे “आसन्न’’ हानि की संभावना हो।
    - यह सुनिश्चित करे कि नए कानून में “आसन्न’’ हानि को इस प्रकार परिभाषित न किया जाए कि वह केवल संभाव्य या संभावित हानि को सम्मिलित करे, बल्कि केवल उस हानि को सम्मिलित करे जसंबंधित भाषण से प्रत्यक्ष और तत्काल घटित या तीव्रतर हो सके। यह सुनिश्चित करे कि कानून स्पष्ट रूप से “हिंसा” को भौतिक आक्रमणों के साथ जोड़े; “भेदभाव” ऐसे लाभों के वास्तविक वंचना को इंगित करता हो जिसके लिए ऐसी ही समान स्थिति के लोग अधिकृत हों या दंड अथवा सजा अन्य समान स्थिति के लोगों पर थोपे नही जाते हों और “शत्रुता” आपराधिक उत्पीड़न और आपराधिक भयादोहन को इंगित करती हो।

- गैरकानूनी गतिविधि निरोधक अधिनियम और छत्तीसगढ़ विशेष जन सुरक्षा अधिनियम में “गैरकानूनी गतिविधि” की अत्यधिक विस्तारित परिभाषा को संशोधित करें ताकि केवल उसी गतिविधि को प्रतिबंधित किया जाए जो वास्तव में राष्ट्रीय सुरक्षा या सार्वजनिक व्यवस्था के लिए वास्तविक खतरा उत्पन्न करते हों।
- सरकारी गोपनीयता अधिनियम को संशोधित करें:
  - धारा 5(1) को इस प्रकार संशोधित करें ताकि दस्तावेजों की सुपरिभाषित श्रेणियों के खुलासे को ही अपराध माना जाए, सरकार के लिए यह प्रमाण देना आवश्यक हो कि खुलासे से राष्ट्रीय सुरक्षा को पर्याप्त हानि पहुंचने का वास्तविक और स्पष्ट खतरा है, और जनहित की रक्षा की अनुमति हो।
  - धारा 5(2) को समाप्त करे ताकि सरकारी कर्मचारियों से इतर लोगों द्वारा सूचना की प्राप्ति या खुलासे के लिए आपराधिक दंड समाप्त किया जा सके; और
  - धारा 3 को संशोधित करे ताकि केवल उस व्यवहार को दण्डित किया जा सके जिसे सरकार सिद्ध कर सके कि इससे राष्ट्रीय सुरक्षा को वाकई खतरा है।
- भारतीय दंड संहिता की धारा 499 और 500 को समाप्त करे ताकि आपराधिक मानहानि के खतरे को समाप्त किया जा सके। मानहानि को केवल दीवानी मामला रहना चाहिए।
- सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम की धारा 69ए और सामग्री ब्लाक करने संबंधित नियमों को संशोधित करे ताकि किसी भी आनलाइन सामग्री को ब्लाक करने से पहले की आवश्यक कानूनी प्रक्रियाओं को मजबूत किया जा सके और बुनियादी अधिकारों के लिए आवश्यक सुरक्षा उपायों को सुनिश्चित किया जा सके।
  - ऐसे संशोधनों में सम्मिलित होने चाहिए:- सामग्री के लेखक को नोटिस (जहां संभव हो), ब्लाक करने के आदेश `को एक स्वतंत्र कानूनी समीक्षा प्रक्रिया द्वारा चुनौती देने की क्षमता, और यदि सामग्री कानूनन सही पाई जाती है तो उसे वापस लाने की क्षमता।
  - संशोधित नियमों में यह भी शामिल होना चाहिए कि सामग्री ब्लाक करने के हर आदेश की प्रति को ऐसा करने के कारणों के साथ ब्लाक की गयी वेबसाइट पर और संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अंतर्गत इलेक्ट्रानिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी विभाग की वेबसाइट के सार्वजनिक पेज पर प्रकाशित किया जाए। संचार और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय को दूरसंचार एवं इंटरनेट सर्विस प्रदाताओं द्वारा खुलासा करने पर प्रतिबंध हटा देने चाहिए ताकि वे अभी तक उनके द्वारा प्राप्त वेबसाइट ब्लाक करने के अनुरोधों और ब्लाक की गयी वेबसाइटों के संख्या का खुलासा कर सकें।
- या तो आपराधिक भयादोहन के अपराध से संबधित धारा 503 को समाप्त कर दें या इसका दायरा इतना संकुचित कर दें कि आपराधिक कार्यवाही उकसाने के बजाय केवल प्रतिष्ठा की हानि के खतरे और “चेतावनी” देने वाले भाषण को अलग किया जा सके।
- भारतीय दंड संहिता की धारा 505(1)(बी) को संशोधित करें ताकि केवल उसी भाषण का अपराधीकरण किया जाए जो हिंसा या गंभीर सार्वजनिक अव्यवस्था के प्रति लक्षित हो, और स्पष्ट रूप से उन शब्दों

को परिभाषित करें ताकि वे अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप हो सकें।

- न्यायालय की अवमानना अधिनियम की धारा 2(1) को समाप्त करें और धारा 13 और धारा 2 में न्यायालय की अवमानना की परिभाषा को संशोधित करें ताकि व्यवधान या अवरोध पैदा करने की ओर “प्रवृत्त’’ व्यवहार के संदर्भों को हटाया जा सके।
- अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार रोकथाम) अधिनियम की धारा 3(1) को संशोधित करें ताकि इसे आईसीसीपीआर के अनुच्छेद 20 के अनुरूप बनाया जा सके। इसके अंतर्गत भाषणों पर केवल तभी रोक लगाई जाए जब यह भेदभाव, शत्रुता या हिंसा कोबढ़ावा देता हो। अधिनियम में प्रस्तावित संशोधन की धारा 3(1) को इसी प्रकार सीमित किया जाना चाहिए।
- राष्ट्रीय सम्मान के अपमान की रोकथाम अधिनियम 1971 को समाप्त करे ।

महाधिवक्ता के कार्यालय के लिए:

- राजद्रोह और आपराधिक मानहानि के अंतर्गत तमाम जांचों और आरोपों को वापस ले।
- अपमानजनक भाषणों के लिए सभी अभियोजनों और जांचों को बंद करे और स्पष्ट नीति बनाए कि किसी का अपमान करना अपने आप में कतई अपराध नहीं है। उन सभी लोगों के खिलाफ आरोपों और जांचों को बंद करे जिन्होंने शांतिपूर्ण विरोधों में केवल भाग लिया या इसे आयोजित किया।
- सभी अभियोजक कार्यालयों को निर्देश दे कि बगैर जमानत की गिरफ्तारी का अनुरोध केवल तभी किया जाए जब मजबूत और स्पष्ट प्रमाण हों कि आरोपी भाग जाएगा, साक्ष्यों को नष्ट कर देगा या जांच में व्यवधान डालेगा।
- सभी अभियोजनकर्ताओं के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए ताकि सुनिश्चित किया जा सके कि वे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित करने वाले कानूनों पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लगाई गयी सीमाओं से पूरी तरह वाकिफ हैं।
    - दंड संहिता की धारा 124ए के समाप्त होने या संशोधित होने तक अभियोजनकर्ताओं को विशेष रूप से यह सूचित किया जाना चाहिए कि सर्वोच्च न्यायालय के लागू हो सकने वाले निर्णयों के अंतर्गत:
        - राजद्रोह का कानून केवल उस भाषण पर लागू होता है जिसकी प्रवृत्ति या मंशा सार्वजनिक अव्यवस्था फैलाने की होती है ।
        - केवल सरकार या सरकार की नीतियों की आलोचना भारतीय दंड संहिता की धारा 124ए के अंतर्गत मुकदमा चलाने का आधार नहीं हो सकती।
        - भारत या इसके राष्ट्रीय प्रतीकों के प्रति असम्मानजनक भाषण या अभिव्यक्ति अकेले राजद्रोह का मुकदमा चलाने का आधार नहीं हो सकते।
    - गैरकानूनी गतिविधि (रोकथाम) अधिनियम में संशोधन होने तक, अभियोजनकर्ताओं को विशेष रूप से यह सूचित किया जाना चाहिए कि सरकार विरोधी विचार या “गैरकानूनी” समूहों के लक्ष्यों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण विचार रखना कानून के अंतर्गत आरोपों को न्यायोचित ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं है।
    - सार्वजनिक व्यवस्था की सुरक्षा के लिए केवल उन भाषणों को प्रतिबंधित करने का निर्देष देना चाहिए जिनसे गैरकानूनी कार्यवाही के लिए उकसाने या उसके होने की संभावना हो।

- इस रिपोर्ट में चर्चा किए गए कानूनों के दुरुपयोग को न्यूनतम करने के लिए स्पष्ट नीतियों और प्रक्रियात्मक दिशा-निर्देशों को जारी करे।
- मुकदमेबाजों द्वारा देश भर में ढेर सारी शिकायतें दर्ज करने और कथित अपराध के लिए भारी भरकम आरोप मढ़ने की परिपाटी को सीमित करने के लिए कदम उठाए, साथ ही अभियोजनकर्ताओं को प्रशिक्षित करे ताकि संभावित आरोपों की जांच की जा सके कि वे उचित हैं या नहीं।

राज्य सरकारों के लिए

- लंबे समय से प्रस्तावित पुलिस सुधारों को तेजी से शुरू करे ताकि पुलिस द्वारा स्वतंत्र रूप से औरराजनितिक हस्तक्षेप के बगैर कार्य सुनिश्चित किया जा सके ।
- सभी पुलिस विभागों को निर्देश दें कि यह उनका दायित्व है कि वे अपनी अभिव्यक्ति के लिए खतरों का सामना कर रहे लोगों की रक्षा करें।
- सभी पुलिस विभागों को निर्देश दे कि किसी को गिरफ्तार किया जाए या न किया जाए, इसका निर्णय इस आधार पर नहीं होना चाहिए कि उसके भाषण को नापसंद करने वाले या इससे किसी तरह आहत होने वाले इसे हिंसा या अव्यवस्था का खतरा मानते हैं। भाषण के लिए किसी को गिरफ्तार करने का निर्णय केवल साक्ष्य आधारित आकलन पर आधारित होना चाहिए कि संबंधित व्यक्ति ने कानून का उल्लंघन किया है या नहीं।
- सभी पुलिस अधिकारियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि वे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित करने वाले कानूनों पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लगाई गयी सीमाओं सेअच्छी तरह वाकिफ हों।
    - भारतीय दंड संहिता की धारा 124ए के समाप्त होने या संशोधन होने तक अभियोजनकर्ताओं को विशेष रूप से यह सूचित किया जाना चाहिए कि सर्वोच्च न्यायालय के लागू हो सकने वाले निर्णयों के अंतर्गत:
        - राजद्रोह का कानून केवल उस भाषण पर लागू होता है जिसकी प्रवृत्ति या मंशा सार्वजनिक अव्यवस्था फैलाने की होती है ।
        - केवल सरकार या सरकार की नीतियों की आलोचना भारतीय दंड संहिता की धारा 124ए के अंतर्गत मुकदमा चलाने का आधार नहीं हो सकती।
        - भारत या इसके राष्ट्रीय प्रतीकों के प्रति असम्मानजनक भाषण या अभिव्यक्ति अकेले राजद्रोह का मुकदमा चलाने का आधार नहीं हो सकते।
        - बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकृत दिशा निर्देशों के अनुरूप पुलिस के लिए यह अनिवार्य बना दिया जाए कि वह राजद्रोह का आरोप लगाने से पहले जिले के कानून अधिकारी और राज्य के लोक अभियोजक से कारण सहित लिखित में कानूनी राय प्राप्त कर ले।
    - गैरकानूनी गतिविधि (रोकथाम) अधिनियम में संशोधन होने तक, अभियोजनकर्ताओं को विशेष रूप से सूचित किया जाना चाहिए कि सरकार विरोधी विचार या "गैरकानूनी" समूहों के लक्ष्यों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण विचार रखना कानून के अंतर्गत आरोपों को न्यायोचित ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं है।

पुलिस को विशेष रूप से सूचित किया जाना चाहिए कि सार्वजनिक अव्यवस्था के खतरों को "स्पष्ट और वर्तमान खतरे" की जांच से गुजरना होगा और इसमें उकसाने या उकसाने की आशंका वाले भाषण या गैर कानूनी क्रियाकलापों को शामिल करना होगा।

न्यायपालिका के लिए

- न्यायाधीशों और मजिस्ट्रेटों को भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19 के बारे में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए जो कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की गारंटी देता है और भाषण को सीमित करने और अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून के प्रति भारत के दायित्वों को आधार प्रदान करता है।
- सभी मजिस्ट्रेटों और न्यायाधीशों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना चाहिए ताकि सुनिश्चित किया जा सके कि वे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित करने वाले कानूनों पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लगाई गयी सीमाओं से अच्छी तरह वाकिफ हों। पूर्ण रूप से भिज्ञ हैं।
    - दंड संहिता की धारा 124ए के समाप्त होने या संशोधित होने तक अभियोजनकर्ताओं को विशेष रूप से यह सूचित किया जाना चाहिए कि सर्वोच्च न्यायालय के लागू हो सकने वाले निर्णयों के अंतर्गत:
        - राजद्रोह का कानून केवल उस भाषण पर लागू होता है जिसकी प्रवृत्ति या मंशा सार्वजनिक अव्यवस्था फैलाने की होती है ।
        - केवल सरकार या सरकार की नीतियों की आलोचना भारतीय दंड संहिता की धारा 124ए के अंतर्गत मुकदमा चलाने का आधार नहीं हो सकती।
        - भारत या इसके राष्ट्रीय प्रतीकों के प्रति असम्मानजनक भाषण या अभिव्यक्ति अकेले राजद्रोह का मुकदमा चलाने का आधार नहीं हो सकते।
    - गैरकानूनी गतिविधि (रोकथाम) अधिनियम में संशोधन होने तक, अभियोजनकर्ताओं को विशेष रूप से यह सूचित किया जाना चाहिए कि सरकार विरोधी विचार या "गैरकानूनी" समूहों के लक्ष्यों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण विचार रखना कानून के अंतर्गत आरोपों को न्यायोचित ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं है।
    - सार्वजनिक व्यवस्था की सुरक्षा के लिए अवरोध केवल उन भाषणों को प्रतिबंधित करने का निर्देश देना चाहिए जिनसे गैरकानूनी कार्यवाही के लिए उकसाने या उसके होने की संभावना हो। न्यायाधीशों और मजिस्ट्रेटों को विशेष रूप से सूचित किया जाना चाहिए कि सार्वजनिक अव्यवस्था के खतरों को "स्पष्ट और वर्तमान खतरे" की जांच से गुजरना होगा और इसमें उकसाने या उकसाने की आशंका वाले भाषण या गैर कानूनी क्रियाकलापों को शामिल करना होगा।

अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के लिए

- भारत से अनुरोध करे कि वह शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति एवं एकत्र होने के अधिकार की सुरक्षा करे और उपरोक्त अनुशंसाओं में वर्णित सुधारों को लागू करे
- नियमित और सार्वजनिक रूप से भारत सरकार के समक्ष अपनी अभिव्यक्ति और एकत्र होने के अधिकारों का इस्तेमाल करने वाले एक्टिविस्टों और आम नागरिकों की गिरफ्तारी पर चिंता व्यक्त करे और मांग

करे कि उन पर लगे आरोपों को समाप्त किया जाए और इसके लिए बंदी बनाए गए लोगों को तत्काल रिहा किया जाए।

- अगले वर्ष 2017 में होने वाली 'भारत के सार्वभौमिक आवर्ती समीक्षा' (India's Universal Periodic Review) बैठक के दौरान इस रिपोर्ट में उल्लिखित अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मुद्दे को उठाए।
- भारत को इस बात के लिए प्रोत्साहित करे कि वह विचारों एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकारों के प्रोत्साहन और सुरक्षा पर संयुक्त राष्ट्र के विशेष रिपोर्टर को तथ्यान्वेषी दौरे पर बुलाए ।
- सभी स्तर के न्यायाधीशों को अभिव्यक्ति और एकत्र होने की स्वतंत्रता के अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के बारे में प्रशिक्षण में मदद की पेशकश करे।